Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 GISRRJ | Volume 3 | Issue 5 | ISSN : 2582-0095

सांख्यकारिका में मानव स्वास्थ्य चिन्तन

काजल राय
शोधच्छात्रा
संस्कृत एवं प्राकृत भाषा विभाग
दी0द0उ0गो0वि0वि0,गोरखपुर,
उत्तर प्रदेश,भारत।

Article Info
Volume 3 Issue 5
Page Number: 40-45
Publication Issue :
September-October-2020

सारांश– सांख्य के पच्चीस तत्त्वों का ज्ञान प्रत्येक मानव के लिए बहुत ही आवश्यक है क्योंकि इन तत्त्वों का ज्ञान होने पर ही मानव इनके कार्यो को जानेगा और स्वयं के लिए तथा समाज के लिए जो हितकारी होगा वह आचरण करेगा। महत् से लेकर पांच महाभूतों तक का नियंत्रण प्रकृति एवं प्रकृति का नियंत्रण पुरूष के हाथ में होगा तो प्रत्येक व्यक्ति एक सामंजस्यपूर्ण जीवन का निर्वहन करेगा। वर्तमान में हम भौतिकता एवं पाश्चात्य की आंधी में अनियंत्रित हो गये है। ऐसी स्थिति हमारी ज्ञानेन्द्रियां, कर्मेन्द्रियां, तन्मात्राए, मन, बुद्धि, अहंकार सभी जड और अनियंत्रित अवस्था में है। हमें अपने वर्तमान और भविष्य के रक्षण के लिए आवश्यक है कि हम अपनी मूल प्रकृति , अपने निसर्ग को जाने तभी स्वयं का और समाज का रक्षण करने में समर्थ हो पायेंगे। हमारी मूल प्रकृति को सदा पुरूष के संरक्षण में रहना चाहिए क्योंकि प्रकृति क्रियाशील तो होती है किन्तु जड होती है इसलिए उसे चैतन्य पुरूष का संरक्षण आवश्यक है। पुरूष के हाथ में प्रग्रह न्यस्त किये विना हमारा अधिकांश कार्य विध्वंसक होगा। हम विकासकर्त्ता से अधिक विनाशकर्त्ता सिद्ध होंगे। हमारी बुद्धि अज्ञानाच्छादित ना हो, अहंकार विनाशक रूप ना धारण करे, मन सदा विकल्पों में ना फंसा रहे, ज्ञानेन्द्रियां, कर्मेन्द्रियां, तन्मात्राए विषय लोलुप ना हो जाए इसलिए सांख्य का ज्ञान विशेषतः पुरूष का ज्ञान नितान्त ही आवश्यक है। सांख्य का ज्ञान हो जाने पर व्यक्ति त्रिविध तापों से ऐकान्तिक और आत्यन्तिक मुक्ति प्राप्त कर लेता है।

मुख्य शब्द – सांख्यकारिका, अहंकार, प्रकृति, पुरुष, इन्द्रिय, स्वास्थ्य, मानव, समाज।

Article History
Accepted : 20 Sep 2020
Published : 05 Oct 2020

Copyright : © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

संस्कृत वांग्मय की दोनों परम्परा – वैदिक वांग्मय और लौकिक वांग्मय का जब अध्ययन करते है तो वेद से लेकर आधुनिक संस्कृत साहित्य तक जितने भी ग्रन्थ हैं , उनमें जिन विषयों का वर्णन हुआ है उन समस्त विषयों का मानव जीवन से गहरा सम्बन्ध है। मानव जीवन का चाहे कोई भी पक्ष हो यथा वैयक्तिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, आध्यात्मिक सभी पक्षों के लिए एक उचित मार्ग निर्देशन संस्कृत साहित्य में वर्णित है। संस्कृत भाषा में मानव के स्वस्थ जीवन के लिए विविध प्रकार के ग्रन्थों का प्रणयन हुआ है। वर्तमान समय की स्थिति को देखे तो भारत ही नहीं पूरा विश्व 'COVID-19' महामारी के कारण मानव स्वास्थ्य को लेकर चिन्ताग्रस्त है। इस VIRUS के कारण प्रतिदिन मृत्यु की भयावहता बढती जा रही है। ऐसी स्थिति में चिन्ता और चिन्तन का विषय यदि कुछ है तो वह मानव का स्वास्थ्य है। आज पूरा विश्व इस चिन्ता में है कि किस नियम, आचार, आदर्श, व्यवहार का पालन किया जाए कि इस विकटतम स्थिति से बाहर आया जा सके। इस महामारी के प्रकोप से रक्षण के लिए जितने नियम बताए जा रहे है वह पहले से ही संस्कृत ग्रन्थों में नित्य–नैमित्तिक कर्म के रूप में वर्णित है। यदि इन नियमों का पालन प्रारम्भ से ही किया गया रहता तो यह भयावह स्थिति आज उत्पन्न ही नही हुई रहती । संस्कृत ग्रन्थों का तो मूलोद्देश्य ही रहा है, स्वस्थ्य शरीर एवं स्वस्थ्य मन के साथ मोक्ष के लिए प्रयाण करना। संस्कृत ग्रन्थों में मानव को निरामय रखने के जो उपाय है वह क्षणिक नही अपितु ऐकान्तिक और आत्यन्तिक है। स्वास्थ्य का तात्पर्य केवल शारीरिक स्वस्थता से नहीं होता है। व्यक्ति का आधि और व्याधि दोनों से मुक्त होना ही उत्तम स्वास्थ्य का लक्षण है।

महाभारत युद्ध में जब अर्जुन युद्ध से पलायन करते हैं तो अर्जुन का वह पलायन उनकी मानसिक रूग्णता का ही परिचायक है। धर्म संस्थापनार्थ युद्ध में उनकी स्थिति बनाये रखने के लिए एवं मानसिक रूग्णता से मुक्त करने के भगवान् उन्हें जो प्रथमतः ज्ञान देते है वह श्रीमद्भगवद्गीता का द्वितीय अध्याय ''सांख्य योग''के नाम से जाना जाता है। वर्तमान समय में covid 19 महामारी में लाखों लोग शारीरिक रूप से इससे पीडित हैं जो पूरी आबादी का बहुत ही कम प्रतिशत है, लेकिन मानसिक रूप से यहां शत–प्रतिशत लोग पीडित हैं। अर्जुन जैसी स्थिति से मुक्ति के लिए आवश्यक की हम भी सांख्य की शरण ग्रहण करें।

भारतीय आस्तिक षड्दर्शनों का मूल उद्देश्य मानव जीवन को अति उत्तम बनाने के लिए अलौकिक दृष्टि प्रदान करना था। इसमें जब हम सांख्यकारिका का दर्शन करते है तो इस ग्रन्थ का प्रारम्भ ही 'दुःखत्रय के विघात के उपाय' से होता है।

दुःखत्रयाभिघाताज्जिज्ञासा तदपघातके हेतौ

दृष्टे साऽपार्था चेन्नैकान्तात्यन्तोऽभावात्।।[1]

भारतीय दर्शन ने दुःख को तीन प्रकार का माना है – आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक। आत्मा में जो दुःख उत्पन्न होता है ,वह आध्यात्मिक दुःख कहा जाता है। वस्तुतः आत्मा का दुःख से कोई सम्बन्ध नहीं है, यहां आत्मा का तात्पर्य 'शरीर' और 'मन' है। अतः शारीरिक एवं मानसिक दुःख को आध्यात्मिक दुःख कहा जाता है।

शारीरिक दुःख – वात, पित्त और कफ तथा मानसिक दुःख – काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय आदि है। इन त्रिविध तापों का ऐकान्तिक एवं आत्यन्तिक निवारण सांख्यकारिका का मुख्य विषय है। कारिकाकार त्रिविध तापों से मुक्ति का केवल एक ही मार्ग श्रेष्ठ मानते है वह मार्ग पच्चीस तत्त्वों का सम्यक् ज्ञान है। इन दुसाध्य त्रिविध तापों से रक्षण करने में ना लौकिक उपाय समर्थ है ना ही वैदिक उपाय ही समर्थ है क्योंकि ये दोनों उपाय तीन दोषों– अशुद्धि, क्षय और अतिशय से युक्त हैं। फिर ऐसे किस समाधान का वरण किया जाए जो स्वयं विकृतियों से मुक्त हो और मानव को दुःखों से मुक्त कर सके , ऐसी स्थिति में पच्चीस तत्त्वों का ज्ञान ही त्रिविध तापों का विनाशक है।

दृष्टवदानुश्रविकः ह्यविशुद्धिक्षयातिशययुक्तः।
तद्विपरीतः श्रेयान् व्यक्ताव्यक्तज्ञविज्ञानात्।।[2]

अब प्रथमतः इन पच्चीस तत्त्वों को जानने की आवश्यकता है कि ये पच्चीस तत्त्व है क्या? ये पच्चीस तत्त्व है – प्रकृति, महत्, अहंकार, मन, पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां, पांच तन्मात्राए,पांच महाभूत और पुरूष।

मूलप्रकृतिरविकृतिर्महदाद्याः प्रकृतिविकृतयः सप्त।
षोडशकस्तु विकारो न प्रकृतिर्न विकृतिः पुरूषः।।[3]

इन पच्चीस तत्त्वों में मूल प्रकृति केवल प्रकृति है किसी का विकार नहीं अर्थात् मूलप्रकृति सबका उद्गम केन्द्र तो है ही साथ ही साथ प्रकृति पूर्णतः विशुद्ध है यह भाव भी ग्रहण होता है। प्रकृति से सात विकार उत्पन्न होते है जो प्रकृति भी हैं और विकृति भी है। ये सात तत्त्व महत् , अहंकार और पंचतन्मात्राएं प्रकृति से उत्पन्न होते ही जैसे ही संसार के सम्पर्क में आती है इनमें विकार उत्पन्न हो जाता है और फिर इनसे सोलह विकारों की उत्पत्ति होती है। ये सोलह विकार हैं – पंच ज्ञानेन्द्रियां, पंच कर्मेन्द्रियां, मन और पंच महाभूत। ये तत्त्व केवल और केवल विकार है और जो विकार है वे ही समस्त दुःखों के मूल हैं। इन चौबीस तत्त्वों के अतिरिक्त एक पच्चीसवां तत्त्व है पुरूष जो ना ही प्रकृति है ना ही विकृति । जो प्रकृति और विकृति से मुक्त तत्त्व हैं वही सबका नियन्ता बनता है।

मानव के जीवन में जो अस्वस्थ्ता उत्पन्न हो रही है उसके मूल में ये सोलह तत्त्व ही है इसीलिए श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् अर्जुन से कहते हैं–

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते।
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि।।[4]
तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः।
इन्द्रियाणिन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।[5]

जिस प्रकार पानी में तैरती नाव प्रचण्ड वायु द्वारा बहा ले जाती है उसी प्रकार विचरणशील इन्द्रियों में से कोई एक जिस पर मन निरन्तर लगा रहता है, मनुष्य की बुद्धि को हर लेती है।

अतः हे महाबाहु! जिस पुरूष की इन्द्रियाँ अपने–अपने विषयों से सब प्रकार से विरत होकर उसके वश में है,उसी की बुद्धि निस्सन्देह स्थिर है।

कठोपनिषद् में भी इन्द्रिय–निग्रह पर विशेष बल दिया गया है–

आत्मान ँ् रथिनं विद्धि शरीर ँ् रथमेव तु।

बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च।।[6]

इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषया ँ्स्तेषु गोचरान्।

आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः।।[7]

यस्त्वविज्ञानवान्भवत्ययुक्तेन मनसा सदा।

तस्येन्द्रियाण्यवश्यानि दुष्टाश्वा इव सारथेः।।[8]

यस्तु विज्ञानवान्भवति युक्तेन मनसा सदा ।

तस्येन्द्रियाणि वश्यानि सदश्वा इव सारथेः।।[9]

"आत्मा रथी है, शरीर रथ , बुद्धि सारथी है तथा मन लगाम है । विवेकी पुरूष इन्द्रियों को अश्व कहते हैं, इन्द्रियों के विषय अश्वों के मार्ग है तथा शरीर, इन्द्रिय एवं मन से युक्त आत्मा भोक्ता है। किन्तु जो सर्वदा अविवेकी एवं असंयतचित्त से युक्त होता है उसके अधीन इन्द्रियां उसी प्रकार नहीं रहती हैं जैसे सारथी के अधीन दुष्ट घोडा नही रहता। परन्तु जो कुशल और सर्वदा समाहितचित्त रहता है उसके अधीन इन्द्रियां इस प्रकार रहती हैं जैसे सारथी के अधीन अच्छे घोडे।"

इन तेईस तत्त्वों पर नियन्त्रण अति आवश्यक है तभी प्रत्येक मनुष्य शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ होगा। Corona pandemic situation भी एक अनियन्त्रित मन और स्वच्छन्द बुद्धि का ही परिणाम है। यह Virus Attack एक राष्ट्र का पूरे विश्व को जीतने की कुत्सित इच्छा का ही प्रतिफल है।

ये तेईस तत्त्व जो बन्धनकारी हैं उनकी प्रकृति को जानना नितान्त आवश्यक तभी हम मुक्तिदायक पुरूष के स्वभाव को सही ढंग से समझ पायेंगे। ये तेईस तत्त्व कुछ प्रकृति से भिन्न कुछ प्रकृति के समान होते है।

हेतुमदनित्यमव्यापि सक्रियमनेकमाश्रितं लिंगम्।

सावयवं परतन्त्रं व्यक्तं विपरीतमव्यक्तम्।।[10]

व्यक्त अर्थात् महदादि से पृथ्वी पर्यन्त तेईस तत्त्व सकारण ,अनित्य ,अव्यापक, सक्रिय, अनेक, अपने कारणों पर आश्रित, प्रकृति का अनुमापक हेतु सावयव और परतन्त्र होते हैं। अव्यक्त अर्थात् प्रकृति इससे विपरित होती है। इन तत्त्वों में प्रकृति के साथ कुछ साम्यता भी है यथा–

त्रिगुणमविवेकी विषयः सामान्यमचेतनं प्रसवधर्मि।

व्यक्तं तथा प्रधानं तद्विपरीतरत्तथा पुमान्।।[11]

प्रकृति के साथ–साथ ये तेईस तत्त्व त्रिगुणी, अविवेकी, विषय, सामान्य, अचेतन और प्रसवधर्मी है। इसमें इन तत्त्वों का त्रिगुणात्मक होना ही जीव के बन्धन और मोक्ष का कारण बनता है। जब ये सत्त्व गुण के प्रभाव में रहते है तो सुखात्मक, रजस् के प्रभाव में दुःखात्मक और तमस् के प्रभाव में प्रीत्यात्मक होते है। ये तीनों गुण प्रत्येक जीव में

रहते हैं किन्तु जब सत्त्व की प्रधानता होती है तो जीव बन्धनों से मुक्तिदायक कार्यों को करता है तथा रजस् एवं तमस् में बन्धनकारी कार्यों को करता है। बुद्धि के लक्षण को बताते हुए ग्रन्थकार लिखते हैं –

अध्यवसायो बुद्धिधर्मो ज्ञानं विराग ऐश्वर्यम्।

सात्त्विकभेतद्रूपं तामसमस्माद् विपर्यस्तम्।।[12]

निश्चयात्मक ज्ञान ही बुद्धि का मुख्य लक्षण है यह जब सत्त्व गुण के प्रभाव में रहती है तो धर्म, ज्ञान, वैराग्य एवं ऐश्वर्य का कारण होती है और जब तामस् गुण के प्रभाव में रहती है तो अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य एवं अनैश्वर्य का कारण बनती है।

बुद्धि के ये आठ गुण प्रकृति के बन्धन और मुक्ति के हेतु होते है। यह प्रकृति आठ तत्त्वों में से सात– अज्ञान, धर्म–अधर्म, ऐश्वर्य–अनैश्वर्य, वैराग्य–अवैराग्य से स्वयं को बांधती है एवं एक रूप ज्ञान से स्वयं को मुक्त करती है।

रूपैः सप्तभिरेव तु बध्नात्यात्मानमात्मना प्रकृतिः।

सैव च पुरूषार्थं प्रति विमोचयत्येकरूपेण।।[13]

कठोपनिषद् में भी बुद्धि को सारथि कहा गया है अर्थात् अहंकार, सभी एकादश इन्द्रियां, पंच तन्मात्राए, पंच महाभूत सभी बुद्धि के नियन्त्रण में रहते है, जब बुद्धि ज्ञान से सम्पृक्त रहती है तो सबको मुक्त कर देती है। जिस प्रकार सारथि रथ के सही दिशा एवं गलत दिशा का निर्धारणकर्त्ता होता है वैसे ही बुद्धि भी व्यक्ति के उर्ध्वगमन और अधोपतन का कारण होती है। बुद्धि से ही हम प्रकृति एवं पुरूष के कार्यो में विभेद कर पाते हैं। जब हम स्वयं में उचित– अनुचित की प्रज्ञा का विकास कर लेते हैं तो हम अनायास ही पुरूष की शरण ग्रहण करते हैं। पुरूष के शरण में जाते ही हम जीवनमुक्त हो जाते है। यह जीवनमुक्ति का स्वभाव ही व्यक्ति को पूर्णतः स्वस्थ रखता है।

जीवन–मुक्त होते ही व्यक्ति समस्त द्वन्द्वों से मुक्त होते अपने यथार्थ रूप से परिचित होते ही स्वतः स्वस्थ हो जाता है।

एवं तत्त्वाभ्यासान्नास्मि न मे नाहमित्यपरिशेषम्।

अविपर्ययाद् विशुद्धं केवलमुत्पद्यते ज्ञानम्।।[14]

"इस प्रकार तत्त्वज्ञान के अभ्यास से 'न मैं क्रियावान् हूं', 'न मेरा यह भोग्य शरीर है' और 'ना ही मैं कर्त्ता हूं' इस प्रकार का मिथ्या ज्ञान रहित होते ही विशुद्ध सम्यक् ज्ञान उत्पन्न होता है।"

इन पच्चीस तत्त्वों का ज्ञान प्रत्येक मानव के लिए बहुत ही आवश्यक है क्योंकि इन तत्त्वों का ज्ञान होने पर ही मानव इनके कार्यो को जानेगा और स्वयं के लिए तथा समाज के लिए जो हितकारी होगा वह आचरण करेगा। महत् से लेकर पांच महाभूतों तक का नियंत्रण प्रकृति एवं प्रकृति का नियंत्रण पुरूष के हाथ में होगा तो प्रत्येक व्यक्ति एक सामंजस्यपूर्ण जीवन का निर्वहन करेगा। वर्तमान में हम भौतिकता एवं पाश्चात्य की आंधी में अनियंत्रित हो गये है। ऐसी स्थिति हमारी ज्ञानेन्द्रियां, कर्मेन्द्रियां, तन्मात्राए, मन, बुद्धि, अहंकार सभी जड और अनियंत्रित अवस्था में है। हमें अपने वर्तमान और भविष्य के रक्षण के लिए आवश्यक है कि हम अपनी मूल प्रकृति , अपने निसर्ग को जाने तभी स्वयं का और समाज का रक्षण करने में समर्थ हो पायेंगे। हमारी मूल प्रकृति को सदा पुरूष के संरक्षण में

रहना चाहिए क्योंकि प्रकृति क्रियाशील तो होती है किन्तु जड होती है इसलिए उसे चैतन्य पुरूष का संरक्षण आवश्यक है। पुरूष के हाथ में प्रग्रह न्यस्त किये विना हमारा अधिकांश कार्य विध्वंसक होगा। हम विकासकर्त्ता से अधिक विनाशकर्त्ता सिद्ध होंगे। हमारी बुद्धि अज्ञानाच्छादित ना हो, अहंकार विनाशक रूप ना धारण करे, मन सदा विकल्पों में ना फंसा रहे, ज्ञानेन्द्रियां, कर्मेन्द्रियां, तन्मात्राए विषय लोलुप ना हो जाए इसलिए सांख्य का ज्ञान विशेषतः पुरूष का ज्ञान नितान्त ही आवश्यक है। सांख्य का ज्ञान हो जाने पर व्यक्ति त्रिविध तापों से ऐकान्तिक और आत्यन्तिक मुक्ति प्राप्त कर लेता है।

प्राप्ते शरीरभेदे चरितार्थत्वात् प्रधानविनिवृत्तौ।
ऐकान्तिकमात्यन्तिकमुभयं कैवल्यमाप्नोति।।[15]

सन्दर्भ ग्रन्थ

1– ईश्वरकृष्ण सांख्यकारिका –1

2– ईश्वरकृष्ण सांख्यकारिका –2

3– ईश्वरकृष्ण सांख्यकारिका –3

4– श्रीमद्भगवद्गीता – 2–67

5– श्रीमद्भगवद्गीता – 2–68

6– कठोपनिषद् 1–3–3

7– कठोपनिषद् 1–3–4

8– कठोपनिषद् 1–3–5

9– कठोपनिषद् 1–3–6

10– सांख्यकारिका –10

11– सांख्यकारिका –11

12– सांख्यकारिका –23

13– सांख्यकारिका –63

14– सांख्यकारिका –64

15– सांख्यकारिका –68